हज़रत अली (अ0) और जमहूरी ख़िलाफ़त

हकीमुल उम्मत अल्लामा हिन्दी सैय्यद अहमद नक़वी ताबा सराह

हज़रत अली की हुस्ने तद्बीर

हिजाज़ के जंगजू जाहिल अरब और ख़ुद ग़रज़ व लालची, कंगाल, कीनावर, बेअम्नी की ज़िन्दगी बसर करने वाले ऐसे न थे जो रसूल (स0) की कुछ दिनों की तालीम से तहज़ीब और शराफ़त वाले हो जाते। यह ख़ूबियाँ तो अरबों को मीरास में मिली थीं जिसके दूर होने के लिए बहुत बड़े ज़माने की मोहलत चाहिए थी। इसीलिए तो रसूल (स0) की आँख बन्द होते ही उस क़ौम की फितरी ज़हनियत लौट आई थी। रसूल (स0) की आला तालीम का असर अगर उन पर कुछ होता तो रसूल (स0) का लाशा बे कफ़न व बे दफ़न न पड़ा रहता। कम से कम मदीने के आस–पास के लोग रसूल (स0) के जनाज़े के साथ होते, धूम से रसूल (स0) का जनाज़ा उठता। मज़ा तो यह कि ख़ुद रसूल के साथी दफ़न में शरीक न थे, ख़िलाफ़त की धुन में लगे हुए थे। रसूल (स0) के दफ़न से अगर ख़िलाफ़त अहम थी तो अली (अ0) व बनी हाशिम ने इस अहमियत को क्यों नज़रअन्दाज़ किया। रसूल के साथियों ने अली (अ0) व बनी हाशिम को क्यों न मजबूर किया कि पहले ख़िलाफ़त के मसले को मिलजुल कर तैय करें, फिर रसूल का दफ़न मिलजुल कर हो। यही तो तीसरे ख़लीफ़ा के साथ सबने किया। न किसी ने गुस्ल दिया, न कफ़न, न नमाज़ जनाज़ा पढ़ी, न दफ़न किया। तारीख़ बता दे किस धूम से तीसरे ख़लीफ़ा का जनाज़ा उठाया? उस वक़्त मिस्री बलवाइयों का बहाना था। एक हज़ार बलवाइयों के मुक़ाबले में हज़ारों मदीने के बसने वाले चूड़ियाँ पहने घरों में बैठे रहे और तीन रोज़ तक ख़लीफ़ा उसमान की लाश पड़ी रहने दी! अगर ख़िलाफ़त की इतनी अहमियत थी कि रसूल बे कफ़न और बे दफ़न पड़े रहे और ख़िलाफ़त साज़ी पहले हो जाए, तो यह अहमियत ख़लीफ़ा उसमान के वक़्त क्यों जाती रही? सात रोज़ तक उम्मत बे ख़लीफ़ा रही। सारी हाए वावेला अली (अ0) की ख़िलाफ़त के बाद हुई। उसमान की लाश पर कौन रोने आया? यह सब तारीख़ के खुले वाक़ेआत हैं। धांदली जो चाहे करो। ख़ुदा की किताब जलाई गई। रसूल की सोहबत की यही इज़्ज़त थी कि आपस में जूती पैज़ार, रद्दो क़दह, मार–पीट के मुज़ाहरे शुरु हो गए। किसी सहाबी की मार–पीट से पसलियाँ तोड़ दी गईं, किसी सहाबी को इतना पीटा कि फ़त्क़ का मर्ज़ हो गया, कोई शहर बदर किया गया और किसी सहाबी की मूँछें उखाड़ी गईं, किसी को धोके से रात को क़बीले वालों ने बेख़बरी में क़त्ल किया, और उसी रात उसकी बीवी के साथ उसके शौहर की लाश के सामने ज़िना किया गया। रसूल (स0) के अहलेबैत का इतना पास किया कि सैय्यदा के घर को जलाने के लिए लकड़ियाँ इकटठा की गईं, दरवाज़ा रसूल की बेटी पर इस तरह ढकेला कि पेट में जनाब मोहसिन की शहादत हुई। अली (अ0) की

गर्दन में रस्सी डाली गई, ख़ुम्स औलादे रसूल का हक़ बन्द किया गया, बाग़े फ़िदक छीन कर औलादे रसूल को फ़ाक़ाकशी में डाल दिया गया। तारीख़ें ऐसे वाक़ेआत से भरी पड़ी हैं। इस आपाधापी और हड़बोंग में जब कि मुल्क में मार्शल लॉ जारी हो, रसूल (स0) के प्रोग्राम का पूरा करने वाला, रसूल का मिशन चलाने वाला रस्साकशी में मुबतिला होता तो अपना क़त्ल कराता और मुनाफ़ेक़त के सैलाब में बेमुज़ाहेमत व रोक टोक के इरतेदाद का बाअिस होता और हक़ की आवाज़ भी बुलन्द करने वाला न रहता।

अली (अ0) ने वही किया जो ग़ारे हिरा के बैठने वाले ने कियाः ख़ामोश मुक़ाबलाः तर्के मवालात के साथ दीने हक़ की ख़ामोश तबलीग़। रिसालत की शुरुआत में जैसे रसूल (स0) के लिए शेबे अबी तालिब की क़ैद थी ऐसे ही अली (अ0) घर में क़ैद दीने हक़ की तबलीग़ करते रहे।

इस्लामी रवादारी

अली (अ0) ने तीनों ख़िलाफ़तों में अपने दुश्मनों से उनकी भलाई के मौक़े पर शिरकत और मदद में कमी नहीं की और अमली इस्लामी रवादारी का सुबूत दिया, उनकी मुख़ालिफ़ाना रफ्तार से अलग रहे। यह इस बात की तालीम थी कि जब दुश्मनों में घिर जाओ, मक़ासिद व उसूल की तबलीग़ दुश्वार हो, उस वक़्त बेहतरीन तबलीग़ का तरीक़ा यही है कि अच्छाईयों में ताईद व शिरकत करो और बुराई में मदद न करो।

जमहूरियत और इस्लाम

जमहूरियत को इस्लाम से दूर का भी लगाव नहीं है। क्या कोई नबी जमहूर के वोट से चुना गया है? ख़ुद रसूल (स0) क्या जमहूर के वोट से चुने गए? दावते ज़ुलअशीरा में रसूल (स0) का साथ किसने दिया सिवाए जनाबे ख़दीजा और अली मुर्तज़ा (अ0) के? किसने सबसे पहले नमाज़ पढ़ी? रसूल (स0) ने किस क़ौल और फेल से जमहूरियत की ताईद की? मन्सूब की हुई हदीसों और आयतों का जवाब हमारी किताब ''जमहूरियत व इस्लाम'' में देखो। रसूल (स0) तो जमहूरियत मिटाने आए थे। ''कुसैइ'' ने क़ुरैशी कांग्रेस की बुनियाद डाली और इसी से उनको शोहरत हुई, क्योंकि वह अम्नो अमान के ज़ामिन थे। उस वक़्त सरदार और रईस, वोट और अरब की कस्रते राए से चुना जाता था।

(तारीख़े ख़ज़रमी मुअल्लिफ़ डायरेक्टर मिस्र युनिवर्सिटी)

रसूल (स0) ने इस जमहूरियत के ख़लाफ़ जेहाद का झण्डा बुलन्द किया और अपनी ज़ात को आम राए के ख़िलाफ़ पेश किया। जमहूरियत ऐसी ख़तरनाक चीज़ थी जिससे अरस्तू जैसी हस्ती ने कानों पर हाथ धरे और कहाः मेरे ख़याल में शख़्सी हुकूमत जमहूरी हुकूमत से बेहतर है शर्त यह है कि बादशाह इन्साफ़ करने वाला हो, नेक, नम्र और अपनी चाहतों से पाक हो।'' ख़ुद ''ख़ज़रमी'' ने क़बूल किया है कि सबसे अच्छा तरीक़ा यही था कि ख़लीफ़ा अपने मरने से पहले वली अहद तै करे, क्योंकि यह उस इख़्तिलाफ़ को दूर करेगा जो चुने गए इमाम की मनमानी से उम्मत के लिए तबाही वाला होगा।

सक़ीफ़ा में सहाबियों का इज्तेमा होकर वोटिंग होती है। अली (अ0) और अली (अ0) के मानने वाले ख़ामोश घर में बैठते हैं और एलानिया दरबारे ख़िलाफ़त में जमहूरियत के ख़िलाफ़ एहतेजाज करते हैं। तीनों ख़िलाफ़तों में उनके

एहतेजाज तारीख़ों में देखिये, इस्लाम से पहले की मुर्दा तारीख़ों की पैरवी करने वालों से हमेशा कटे रहे। गर्दन में रस्सी बंधवाई, क़त्ल की और घर जलने की धमकियाँ सहीं, माल को छीना गया, लेकिन इस जमहूरियत को सही नहीं ठहराया। यही हाल इनकी औलाद का रहा। तारीख़ के न भूलने वाले ज़ुल्म सब झेले, लेकिन जमहूरियत की मदद न करनी थी न की।

जमहूरियत की ख़राबियाँ

हमारी किताब ''जमहूरियत व इस्लाम'' में तफ़सीली बहस मौजूद है लेकिन मुख़्तसर यह है कि ''वोटिंग में हमेशा देखा जाता है कि रोज़ तमाम आलम की जमहूरियतों में तजरेबा और मुशाहेदा गवाह है कि वोट उन्हीं लोगों को मिलते हैं जो आम राए को ज़रपाशी, मक्कारी, धोका दही, हलक़ए अहबाब की वुस्अत, चालबाज़ी, चर्ब ज़बानी पर ज़ोर और प्रोपेगण्डे से मुसख़्ख़र कर सके। आज यूरोप व अमरीका बल्कि दुनिया भर का गोशा–गोशा खुली हुई मिसालें हैं, कहीं दुश्मनी के जज़्बात को भड़काते, कहीं ग़लत इल्ज़ाम व इत्तेहाम लगाकर मुक़ाबिल की हरदिल अज़ीज़ी को मिटाते हैं। ऐसी जमहूरियत को इस्तेह्क़ाक़ व क़ाबलियत और हक़ परस्ती से दूर का भी लगाव नहीं होता है। इस्लाम जो हक़ परस्ती, तबलीग़े हक़ व सदाक़त व रवादारी, मुहब्बत और एख़लास के लिए आया था, इस में ऐसी गन्दी चीज़ की कहाँ गुन्जाइश थी? जमहूरियत भी शहनशाहियत व इक़्तेदार का नाम है जो शख़सियत से बहुत ही मक्कार और ख़ुदग़रज़ों, इक़्तेदार परस्तों के हाथ में होता है। इस्लाम तो शहनशाहियत व ग़लत माद्दी इक़्तेदार का दुश्मन है, फिर जमहूरियत की कब ताईद कर सकता है?

रसूल की ख़िलाफ़त में क्या हुआ? तैम व अदी, बनी उमैय्या की बनी हाशिम से पुरानी दुश्मनी और आपसी इत्तेहाद ने बनी हाशिम को हमेशा के लिए शिकस्त दी। सक़ीफ़ा में बनी हाशिम को दूध की मक्खी की तरह निकाल फेंका। कोई बता दे सक़ीफ़ा में जो जमहूरियत क़ाएम की जा रही थी इसमें कितने बनी हाशिम थे, बनी अब्बास का कौन नुमाइन्दा था, बनी उमैय्या का सबसे बड़ा नुमाइन्दा अबुसुफ़यान कब शरीक था, अरब के बाहरी इलाक़ों का कौन नुमाइन्दा था? ज़ियाद बिन लबीद हाकिम हज़रमौत के दरबार की बातचीत तारीख़ों में पढ़ो। हारिस बिन सुराक़ा, अश्अस बिन क़ैस किन्दी, हारिस बिन मुआविया, अरफ़जा बिन अब्दुल्लाह की बहसें ख़िलाफ़त से इन्कार पर देखो, किन्दा पार्टी की सिविल नाफ़रमानी देखो। क्या इसका नाम जमहूरियत है?

जनाब अबूबक्र व उमर से हज़रत अली (अ0) का फ़रमाना कि तुमने ख़िलाफ़त हासिल करने में बड़ी जल्दी की। (किताब अलइमामह वस सियासियह) इसका खुला हुआ क्या मतलब था? इस वोटिंग में दवा दोश व प्रोपेगण्डा कितना हुआ था? बाद वफ़ात जनाब उमर मज्लिसे शूरा किन मिम्बरों से बनाई गई थी और उन मिम्बरों को सिवाए ख़ुद की राए के आम राए से कब चुना गया था? सब मिम्बर हुकूमत के नामज़द करने से चुने गए थे। अली (अ0) का नाम ज़रूरत से रखा था ताकि राए के एक हो जाने से हार तो लाज़मी है, फिर एक मुख़ालिफे जमहूरियत को क्यों एहतेजाज का मौक़ा दें। अली (अ0) को अपने

नाम से इख़्तेलाफ़ का चारा न था। मुत्तफ़िक़ा तौर पर शोहरत दी जाती कि अली (अ0) अपनी ख़िलाफ़त से अलग हो गए, वह कोई ख़िलाफ़त का हक़ नहीं रखते, न दावेदार हैं, दूसरे ख़लीफ़ा के चुनने के बाद भी इन्कार कर रहे हैं। तारीख़ों में देखो अब्दुर रहमान बिन औफ़ सदर कमेटी शूरा मदीने में लश्करी सरदारों और अपने रफ़ीक़ों से मुलाक़ात करके प्रोपेगण्डा करते रहे कि जनाब उसमान को वोट दिया जाए। क्या अली (अ0) मदीने में रहते हुए, इस प्रोपेगण्डे से बेख़बर थे। अब्दुर रहमान ने इब्ने ज़ुबैर से कहा कि अब्देमनाफ़ के घराने में ख़िलाफ़त न जाने जाए, उन्होंने कहा कि मेरा वोट अली (अ0) के लिए होगा। सअ्द ने कहा कि हम तुम अज़ीज़ है। इस लिए वोट हमको देना, उन्होंने मन्ज़ूर कर लिया। (तारीख़े ख़ज़रमी) इसी साज़िश से उस वक़्त भी अली (अ0) महरूम रहे।

अली (अ0) पर ख़िलाफ़ती पहरे

इमाम शोबी नक़ल करते हैं कि जनाब उमर ने क़ुरैश को मदीने में नज़रबन्द कर दिया था जिससे क़ुरैश की जान पर आ बनी थी। वह कहा करते थे कि मुझे उम्मत से लिए सबसे ज़्यादा जिस ख़तरे का डर है, वह तुम लोगों का दूसरे शहरों में फैल जाना है। एक शख़्स क़ुरैश का (शायद हज़रत अली अ0) ने किसी जंग में शिरकत की इजाज़त चाही तो जनाबे उमर ने फरमायाः ''अल्लाह के रसूल (स0) के साथ जो जंगें तुमने की हैं वह बहुत काफ़ी हैं, इसमें बेहतरी है कि न तुम दुनिया को देखो, न दुनिया तुमको देखे।'' यह पालीसी हज़रत उमर सिर्फ क़ुरैशी मुहाजिरों के थी, मक्का वाले इससे अलग थे। (नहजुल बलाग़ह इब्ने अबिल हदीद, तारीख़े कामिल, जि–7)

सियासते अलवी पर ग़लत इल्ज़ाम

कहने वाले कहते हैं कि अली (अ0) सियासतदाँ न थे, उनके अहद में नाअम्नी (बदअम्नी) रहीं। एतेराज़ करने वाले को तारीख़ की रौशनी में एक एतेराज़ की हक़ीक़त को देखना चाहिए। किसी शख़्स की सियासत पर बहस करने से पहले उसके माहौल पर नज़र चाहिए। सवाल यह है कि मुसलमानों में इख़्तिलाफ़ अली (अ0) के अहद में हुआ होता, तो इसकी ज़िम्मेदारी अली (अ0) पर लगती। ख़िलाफ़ते अली से बहुत पहले ज़ोरों पर इख़्तिलाफ़ मौजूद था। फिर अली (अ0) ग़ैर सियासी नहीं है, बल्कि वह हस्तियाँ ग़ैर सियासी हैं जिनकी हुकूमत के अहद में जाहिलियत के दबे फ़ित्ने जागे। (ख़ज़रावी) ख़ुद जनाब अबूबक्र का ख़लीफ़ा होना तो इत्तेहाद को क़ायम न रख सका, ख़ुद वह और उनके जानशीन लोगों में यकजहती पैदा न कर सका। (कारलाइल किताब एण्डावेल्स ऑफ स्वैप्टिमा) जबकि लोगों के दिलों में नबुवत की दहशत और सच्चा दीन बाक़ी था उसी वक़्त हज़रत अली (अ0) ख़लीफ़ा जाते, तो आपकी हुकूमत व सियासत कहीं बेहतर और ऊँची होती। (जर्जी ज़ैदान मुअर्रिख़ मसीही) पहली ख़िलाफ़त के ही वक़्त से सूबों की गवर्नरियाँ ऐसों के हाथों में पड़ गईं जो ख़ुदगर्ज़ नाख़ुदा तर्स, ऐश पसन्द ज़ालिम थे। रिआया ने भी वही रंग इख़्तियार कर लिया था। जनाबे उसमान के अहद की नाअम्नी व पुरआशोबी की तो कोई हद ही न रही थी जो उनके क़त्ल की वजह बनी। हज़रत अली (अ0) को तो वही माहोल मिला जिसमें ख़िलाफ़ते सालिसा की आग अन्दर को जला चुकी थी।

□□□